ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2022; 8(4): 96-103
www.allresearchjournal.com
Received: 25-12-2021
Accepted: 13-02-2022

Harshita Dwivedi
PhD Scholar, SLL & CS/CIL, JNU, New Delhi, India

Corresponding Author:
Harshita Dwivedi
PhD Scholar, SLL & CS/CIL, JNU, New Delhi, India

आधुनिक हिंदी कथा साहित्य में 'तृतीय-लिंगी' विमर्श

Harshita Dwivedi

प्रस्तावना

प्रायः विद्वान यह मानते रहे हैं कि साहित्य समाज का आईना होता है, एक ऐसा आईना जिसमें झाँककर किसी भी भाषा, साहित्य या समाज का अतीत और वर्तमान को देखा और महसूस किया जा सकता है| कई बार जो बातें या विषय समाज में वर्जित दिखाई पड़ता है, उसके विषय में हम साहित्य के माध्यम से जानकारी कर पाते हैं| परन्तु यह जरुरी नहीं कि साहित्य में हर समुदाय या वर्ग को बराबर का स्थान दिया गया हो, कई बार तो उन समुदायों का जिक्र तक नहीं होता जिन्होंने समाज व्यवस्था को बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई होती है| भारतीय भाषाओं में उपस्थित साहित्य को हम कई दृष्टिकोणों से देख सकते हैं, यहाँ कई सारी परतें देखने को मिल जाएँगी| साहित्य और कला के विषय में हिंदुस्तान हमेशा से बहुत धनी रहा है, परन्तु अगर हम वंचित समुदाय या वर्ग की बात करें तो एक तरह का अंतर्विरोध दिखाई पड़ता है| हिंदी और संस्कृत साहित्य में यह अन्तर्विरोध भरा पड़ा है| भारतीय समाज व्यवस्था विविध स्तरों पर विभाजित है और हर विभाजन की खाई इतनी गहरी है कि उसे आज 21वीं सदी में भी नहीं पाटा जा सका है| जैसे-जैसे हम निरंतर आधुनिकता की ओर बढ़ते जा रहे हैं, जीवन-शैली में परिवर्तन होने के साथ-साथ हम एक तरह की रूढ़िवादिता में जकड़ते और स्वार्थी भी होते गए हैं| भारतीय समाज व्यवस्था में हाशिए का दायरा बहुत बड़ा है, स्त्री, दलित, आदिवासी, तृतीय लिंगी समुदाय और यहाँ तक कि वृद्धावस्था को भी हम हाशिए के वर्ग में शामिल कर सकते हैं| उत्पादन और उपयोगिता की अवधारणा हर समाज में पाई जाती है, खासकर पितृसत्तात्मक समाजों में सत्ता और शक्ति का संतुलन इस तरह रखा गया है कि हर अधिकार 'मर्द' और 'मर्दवाद' पर आकर खत्म होता है| दूसरी बात यह कि हर अनुपयोगी वस्तु या जीव यहाँ तभी तक उपयोगी हैं, जब तक वे उत्पादन की भूमिका में सक्रिय हैं|

लिंग-पूजक भारतीय समाज व्यवस्था में बच्चा न पैदा कर पाने का दोष, विकलांग बच्चा पैदा करने का दोष, आधी-अधूरी संतान पैदा करने का दोष, दिमागी रूप से कमजोर बच्चा पैदा करने का दोष हमेशा 'स्त्री' के मत्थे मढ़ दिया जाता है, पुरुष यहाँ हमेशा निर्दोष रहा है| थर्ड-जेंडर संतान पैदा होना कोई नई बात नहीं या आश्चर्य की बात नहीं..परन्तु यहाँ दोषी उस बच्चे को ही मान लिया जाता है जो यह भी नहीं जानता कि प्रकृति ने उसके साथ क्या अन्याय किया है और अब समाज और परिवार उसके साथ क्या बर्ताव करेगा?

हिंदी साहित्य में किन्नर समाज को केन्द्रित लेखन का प्रारंभ कहानी और उपन्यास विधा से माना जा सकता है| राही मासूम रजा की कहानी 'खलीक अहमद बुआ', शिवप्रसाद सिंह की कहानी 'बिंदा महराज' सुभाष अखिल की कहानी 'दरमियाना' और आगे चलकर नीरजा माधव कृत उपन्यास 'यमदीप' जैसी गिनी-चुनी रचनाओं से हिंदी में किन्नर विमर्श की नींव पड़ी| किन्नर विमर्श को लेकर हिंदी साहित्य में अभी भी ज्यादा कुछ नहीं लिखा गया है| 2002 में यमदीप लिखे जाने के साथ ही हिंदी में उपन्यास लेखन में किन्नर समुदाय को सम्मिलित किया गया| मिथकीय कथाओं, महाभारत, रामायण से लेकर भारतीय भाषाओं के आधुनिक साहित्य तक किन्नर समुदाय का जिक्र जरुर मिलता है, लेकिन उनको केन्द्रित करते हुए कोई विशेष रचना 21वीं सदी से पहले नहीं मिलती| 20वीं सदी के उत्तरार्ध तक आते-आते साहित्य का आस्वादन बदलने लगता है, समाज की सामान्य परिस्थितियों और लोगों को साहित्य में स्थान दिए जाने का चलन जोरों से आता है| मानसिक अवसाद, अकेलापन, पलायन की आवश्यकताएँ, नगरीय और ग्रामीण संस्कृति में परिवर्तन जैसी चीजों के अलावा व्यक्ति मात्र का अस्तित्त्व साहित्य के सन्दर्भ में देखा जाने लगा| इसी के साथ विमर्शवादी साहित्य बहुत ही सशक्त रूप में स्थापित होता दिखाई देता है| स्त्री, दलित या आदिवासी विमर्श के संदर्भ में साहित्य की रूपरेखा स्पष्ट होने लगी| लेकिन यह स्पष्टता हम किन्नर विमर्श के संदर्भ में नहीं पाते हैं, कहने का अर्थ यह है कि लाखों की संख्या वाले किन्नर समुदाय की तरफ साहित्य या संस्कृति का ध्यान गया ही नहीं| कुछ छिटपुट उदाहरणों के अलावा हम कोई भी ऐसा हिस्सा हिंदी साहित्य का नहीं पाते, जहाँ स्पष्ट रूप से यह कहा जा सके कि यहाँ से किन्नर विमर्श का प्रारंभ मान सकते हैं| वास्तव में भारतीय समाज अंतर्विरोधों से भरा हुआ समाज है, यहाँ एक तरफ हम किन्नरों को समाज से बाहर निकाल देते हैं तो दूसरी तरफ उन्हीं से आशीर्वाद भी माँगते हैं| एक तरफ हमारा समाज किन्नरों को समाज में रहने नहीं देना चाहता, सम्पत्ति और अन्य अधिकारों में वारिस नहीं बनाना चाहता तो दूसरी तरफ यह भी मानता है कि शुभ अवसरों पर किन्नरों का आना मंगलकारी है|

यमदीप, हिंदी का पहला उपन्यास है, जिसे किन्नर समाज को केन्द्रित करके लिखा गया था| उपन्यास की मुख्य पात्र नाजबीबी हैं| नाज के माध्यम से हम बनारस की किन्नर बस्ती का सच ठीक उसी तरह समझ सकते हैं, जैसे महाभारत के युद्ध को संजय की दृष्टि से धृतराष्ट्र ने समझा था| कहने का आशय यह है कि भले ही किन्नर समुदाय किसी एक विषय में समानता रखता हो, लेकिन जब बात भाषा, साहित्य, स्थानीयता या संस्कृति की आती है तब वहाँ भी विविधता देखने को मिलती है| उत्तर भारत में किन्नर समुदाय की मान्यताएँ और कथाएँ काफी हद तक दक्षिण या पश्चिम भारतीय किन्नरों से भिन्न पाई गई हैं| बनारस नगर अपने आपमें बहुत विविधता लिए हुए है, भले ही वह धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक या आर्थिक हो, बल्कि आस्था के नाम पर भी बहुत विविधता देखने को मिलती है| महताब गुरु, जो सुकुलगंज किन्नर बस्ती के गुरु हैं, उनकी छत्र-छाया में तमाम छोटे शहरों या कस्बों से आए हुए किन्नर रहते हैं| वे सभी धार्मिक या सामाजिक स्तर पर एक दूसरे से अलग हैं, फिर भी एक-दूसरे को परिवार की तरह समझते हैं| वर्तमान में किन्नर विमर्श के नाम पर जो कुछ भी लिखा जा रहा है, उसका काफी बड़ा हिस्सा अभी भी भ्रमपूर्ण है, जिसका सबसे बड़ा कारण किन्नरों के संदर्भ में मुकम्मल शोध का अभाव है| बचपन की सुनी-सुनाई बातों के आधार पर हम जीवन भर लकीर के फ़कीर बने रहते हैं| आज जब 'अनुच्छेद 377' हट गया है और उससे सम्बन्धित मुद्दे पर भारतीय जनमानस को अभी तक कोई सटीक जानकारी तक नहीं है कि ये था क्या? कई बार शिक्षित और ऊँचे पदों पर पहुँचे लोग भी 'ट्रांसजेंडर' और 'थर्डजेंडर'

का अंतर नहीं कर पाते| 8 मार्च 2019 को कांस्टीट्यूशन क्लब, नई दिल्ली में बीबीसी हिंदी के एक कार्यक्रम में, जो कि महिलाओं के लिए आयोजित किया गया था, जिसका स्लोगन था 'निडर भी लीडर भी'..इस कार्यक्रम में कांग्रेस नेत्री अप्सरा रेड्डी (ट्रांसजेंडर महिला), जो कि कांग्रेस की महिला विंग से हैं, ने दो विवादास्पद बातें कहीं..एक तो यह कि ज्यादातर लोगों का जीवनस्तर सुधर चुका है और उनको कोई समस्या नहीं है, और दूसरी बात यह कि प्रश्न किए जाने के बावजूद उन्होंने ट्रांसजेंडर और थर्डजेंडर का अंतर स्पष्ट नहीं किया बल्कि सबको एक ही श्रेणी में रखने की बात भी कह दी| वास्तविकता यह है कि ट्रांसजेंडर और थर्डजेंडर दोनों ही स्पष्ट रूप से अलग-अलग 'आइडेंटिटी' हैं, जिनको चाहकर भी एक नहीं किया जा सकता, क्योंकि इससे पहचान का संकट खड़ा हो जाएगा|

दो दशक पहले तक हिंदी साहित्य में किन्नर समुदाय को लेकर कुछ भी नहीं लिखा गया था| 21वीं सदी के आरम्भ में हिंदी साहित्य के आस्वादन में भारी बदलाव आया दिखाई देता है| स्त्री, दलित या आदिवासी विमर्श, जो कहीं न कहीं कागजी बनकर रह गया था, अब एक आन्दोलन के रूप में लोगों की चेतना में अपनी छाप छोड़ने लगा था| इन विमर्शों ने अस्मितावादी चेतना को हवा दी, जो लोग हाशिए के बनकर रह गये थे, उन सभी को स्वयं के प्रति जगाने का काम विमर्शवादी साहित्य ने किया| भारतीय समाज में सदियों से एक बड़ा वर्ग, जिसमें स्त्री, दलित, आदिवासी और किन्नर समुदाय जैसे लाखों की संख्या में लोग हाशिए पर रहते आए हैं| उत्पादन और उत्पादकता के मद्देनज़र इन समुदायों का बँटवारा करके इन्हें लगातार हाशिए पर ही रखा गया| भारतीय समाज में किन्नर समुदाय को कोई विशेष स्थान नहीं दिया गया था, और यह केवल भारतीय समाज की बात नहीं है बल्कि दुनियाभर के समाजों या समाज व्यवस्था पर यह बात समान रूप से लागू होती है| दुनिया के हर समाज में किन्नरों को अनुत्पादक श्रेणी में रखकर उन्हें मुख्यधारा के समाज से बहिष्कृत किया जाता रहा| वर्तमान में किन्नर समुदाय को लेकर जो कुछ भी लिखा जा रहा है या जो कुछ भी अन्य कार्य उनके विषय में हो रहे हैं, उनको विमर्श का स्वरुप लेने में अभी बहुत वक़्त लगेगा| इसका एक कारण यह है कि साहित्य में तो यह बातें सामान्य रूप से स्वीकार हो भी जाएँगी| पर आम जनमानस में उनको स्वीकार करने में समय तो लगेगा, क्योंकि भारतीय समाज का एक बड़ा तबका अभी भी किन्नर समुदाय को पुराने चश्मे से ही देखता है| भारतीय समाज व्यवस्था के दो स्तम्भ 'स्त्री' और 'पुरुष' माने गये हैं, आदिम सभ्यता से लेकर आज तक इन्हीं दो स्तम्भों को समाज-व्यवस्था के संचालन और सृष्टि सृजन के योग्य समझा गया है| यही कारण है कि लिंगपूजक भारतीय समाज में सदियों से किन्नर समुदाय, जो लिंग-विहीन हैं, को हाशिए पर रखा जाता रहा| किन्नर समुदाय एक धुंधली लकीर की तरह तब से स्त्री और पुरुष के बीच अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत है, जब से मनुष्य मात्र का अस्तित्व है| किन्नर समुदाय, जो न स्त्री हैं और न पुरुष, जो न गर्भधारण कर सकते हैं और न ही अभिभावकत्व की भूमिका का वहन कर सकते हैं, इसके बाद भी वे हमारे ही समाज और परिवार का हिस्सा हैं| हमें, हमारे जैसे लाखों लोगों की अस्मिता, जरूरतों और सामान्य जीवन जीने की इच्छा से मुँह मोड़ना बेहद अमानवीय कृत्य है| शबनम मौसी फिल्म में शबनम कहती है 'क्या सिर्फ इसलिए कि हम हिजड़ा हैं, हमें जन्म भी तो इसी समाज ने दिया है, नपुंसक मर्द और बाँझ औरत भी हमारे जैसे होते हैं, पर समाज ने उनका बहिष्कार तो नहीं किया| ठीक है, हम औलाद पैदा नहीं कर सकते, लेकिन हम अनाज तो पैदा कर सकते हैं| पढ़-लिखकर डॉक्टर, इंजीनियर, अध्यापक, कला-गुरु तो बन सकते हैं| जैसे हम सब लोगों को दुआएँ बाँटते हैं, वैसे ही डाकिया बनकर सबके सुख-दुःख की चिट्ठियाँ तो उनके घर तक पहुँचा सकते हैं, फिर क्यों भीख की रोटी खाते हैं'| किन्नर कथा उपन्यास की भूमिका में महेंद्र भीष्म लिखते हैं "आखिर ईश्वर ने उनके साथ अन्याय क्यों किया? क्यों हम उन्हें अपने से दूर, सामाजिक दायरे से बाहर हाशिए पर रखते चले आ रहे हैं? उनके प्रति हमारी सोच में अश्लीलता का चश्मा क्यों चढ़ा रहता है? किसी किन्नर के साथ बेहिचक घूमने, टहलने या उसे अपने ड्राइंग रूम में बैठा कर उसके साथ जलपान करने से हम हिचकते हैं, क्यों? इस पर विचार करना होगा, उनका पूरा मान-सम्मान करना होगा" [1] | वास्तविकता यही है कि हम आज

भी उनकी उपस्थिति से असहज होते हैं, सवाल उठाना या पुरातन विचारों को 'फ़िल्टर' करना 21वीं सदी की पीढ़ी को सीखना होगा| वर्चस्वशाली समाज ने सत्ता खोने के डर से समाज को कई टुकड़ों में विभाजित कर दिया, समाज के हर उस वर्ग को हाशिए पर डाल दिया गया जो लोग सत्ता को चुनौती दे सकते थे|

भारतीय समाज एक लिंगपूजक समाज है, इसके प्रमाण हड़प्पा सभ्यता से लेकर वैदिक काल और आज वर्तमान में भी मिलते हैं| यहाँ उत्पादन और उत्पादकता को अत्यंत महत्व दिया जाता है, यही कारण है कि फलहीन वृक्ष को 'ठूंठ' और मातृत्वविहीन स्त्री को 'बाँझ' कहना इस देश की रूढ़ि रही है| परन्तु क्या सिर्फ 'लिंगविहीन' होना ही किन्नरों के बहिष्कृत किए जाने का एकमात्र कारण हो सकता है? ऐसा नहीं है, क्योंकि यही भारतीय समाज शारीरिक रूप से विकलांगों और वृद्धों और मानसिक विक्षिप्तों को बहुत आसानी से अपने बीच रखता है और उनका पोषण भी करता है| ऐसे में लिंगविहीन किन्नरों को भी अपने साथ रखना कोई बहुत बड़ा कार्य नहीं है| वास्तव में यह सारा खेल सत्ता और शक्ति के संतुलन का है| सदियों से भारत में पितृ-सत्तात्मक समाज-व्यवस्था ही रही है, जहाँ स्त्रियों को आभूषण, नैतिकता या आदर्शवाद में उलझाकर रखा गया, दलित या शूद्र वर्ग को अछूत या त्याज्य बनाकर उनकी उपयोगिता को न केवल सीमित कर दिया गया, बल्कि शिक्षा और प्रतिभा या व्यक्तित्व निर्माण के अवसरों से भी वंचित करके रखा गया| किन्नरों के संदर्भ में एक निश्चित दायरा बनाकर रखना संभव नहीं था, क्योंकि किन्नर बच्चा तो किसी भी धर्म, जाति, समुदाय या परिवार में पैदा हो सकता था| यही कारण है कि किन्नरों को परिवार व समाज से सम्बन्धित सभी अधिकारों के दायरे से बाहर कर दिया गया|

हिंदी साहित्य में किन्नर समुदाय को लेकर 2002 ई० से पहले तक केवल 2-3 कहानियाँ ही मिलती हैं, वो भी विमर्श के रूप में नहीं केवल मिथक या हास्य-कथा के रूप में| हिंदी साहित्य के अलावा अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्य में भी किन्नर समुदाय के जीवन-संघर्ष को लेकर कहीं ज्यादा कुछ लिखा गया नहीं मिलता है| पिछले दो-तीन दशकों में किन्नर जीवन से सम्बंधित साहित्य-लेखन का सृजन प्रारंभ हो सका है| 1990 में खुशवंत सिंह ने अंग्रेजी में 'दिल्ली' नमक उपन्यास लिखकर 'भागमती' नामक किन्नर का चरित्र भारतीय समाज और दिल्ली शहर के नजरिए से प्रस्तुत किया था| भारतीय किन्नर समुदाय को लेकर व्यवस्थित रूप से यह पहला उपन्यास था, जो अंग्रेजी में लिखा गया था| इसी उपन्यास के माध्यम से खुशवंत सिंह ने दिल्ली के बसने और उजड़ने की फैंटेसीनुमा रोचक कथा को विस्तार दिया था| इससे पहले शिवप्रसाद सिंह की कहानी 'बिंदा महराज', राही मासूम रज़ा की कहानी 'खलीक अहमद बुआ' और सुभाष अखिल की कहानी 'दरमियाना' कुछ अलग-अलग परिस्थितियों के सन्दर्भ में लिखी जा चुकीं थीं| 'बिंदा महराज' का चरित्र बिंदा मुख्यधारा के बीच ही रहता है, लेकिन फिर भी अलग-थलग| उसका पहनावा, शारीरिक बेडौलपन, रहन-सहन, लहजा उसके आसपास के लोगों के लिए हास्य का साधन है| वहीँ 'खलीक अहमद बुआ' का खलीक, अपने जीवन में धोखा खाया हुआ है, जिस पुरुष के साथ उसका प्रेम था, उसने खलीक को दूसरी स्त्री के विषय में पड़कर धोखा दिया| फलतः खलीक ने अपने पुरुष-मित्र की हत्या कर दी| एक किन्नर के मानसिक रूप को सामाजिक स्वरुप से ज्यादा इस कहानी में देखा जा सकता है| अकेलापन, वृद्धावस्था और जीवन के तमाम अभाव कहीं न कहीं किन्नर व्यक्ति को मानसिक रूप से बीमार या विक्षिप्त भी कर देते हैं| 'दरमियाना' कहानी के नायक आशू के मध्याम से पश्चिमी उत्तर प्रदेश और दिल्ली के किन्नर जीवन का वर्णन किया गया है| किन्नर जीवन की सबसे बड़ी विडंबना यही है कि अगर वे अपने घर-परिवार में रह भी जाएँ या रहना भी चाहें तो एक समय के बाद उनके अपने ही परिवार, समाज या मित्र उनका मजाक बनाने लगते हैं या उनसे बचने और उनकी जिम्मेदारियों को बोझ समझने लगते हैं| अंततः या तो वे आत्महत्या कर लें या फिर अपना घर-परिवार छोड़कर किन्नर समुदाय में शामिल हो जाएँ| यमदीप उपन्यास की महताब गुरु, नाजबीबी के माता-पिता से कहती हैं कि "आप इस बस्ती में रह नहीं सकते बाबूजी, और अपनी बेटी को अपने साथ रख भी नहीं सकते...दुनिया में बदनामी और हँसी-हँसारत के डर से| हिंजड़ी के बाप कहलाना न तो आप बर्दाश्त कर पाएँगे, न आपके परिवार के लोग| लूली-लंगड़ी

होती यह, कानी-कोतर होती, तो भी आप इसे अपने साथ रख सकते थे...इसलिए इसे अब इसके हाल पर छोड़ दीजिए| यही उसका भाग्य था, यही बदा था...सोच लीजिए, मर गई, सब्र कर लिया"[2] | घर-परिवार से विस्थापित होना किन्नर जीवन के संघर्ष की शुरुआत का पहला चरण होता है| हम जिस तरह पूर्वाग्रह में जीने के आदी हैं, किसी भी परम्परा या रुढ़िवादी विचारधारा को आँख बंद करके मानते चलते हैं, उसी का यह परिणाम है कि आज भी हम प्रतिभा-सम्पन्न किन्नर समुदाय को मुख्यधारा के समाज में स्वीकार तक नहीं कर सके हैं|

जिस समाज में स्त्री या पुरुष रहते हैं, उसी समाज के हाशिए पर किन्नर भी रहते हैं..फर्क सिर्फ इतना है कि लैंगिक दृष्टिकोण से न तो वे स्त्री हैं न ही पुरुष| सामाजिक समारोहों, विवाह या अन्य शुभ अवसरों पर हम उनकी उपस्थिति तो चाहते हैं, परन्तु केवल मनोरंजन, मंगल और आशीर्वाद के लिए, न कि मित्र, रिश्तेदार या अन्य किसी रूप में| एक तरफ हम यह मानते हैं कि किन्नर समुदाय के लोगों का आशीर्वाद हमें फलता है और दूसरी तरफ हम उन्हें अपने समाज, परिवार और मुख्यधारा से बाहर भी रखना चाहते हैं| मुख्यधारा के समाज से बहिष्कृत, व्यंग्य, घृणा और तिरस्कार सहने को अभिशप्त किन्नर समुदाय को बहुत से अपमानजनक नामों से जाना जाता है, जैसे- किन्नर, कीव, हिजड़ा, खोजवा, ख्वाजासरा, कोती, छक्का, थिरुनानगाई, शिखंडी, उभयलिंगी, नपुंसक इत्यादि सैकड़ों नाम, जो बेहद अपमानजनक हैं| थर्ड जेंडर, जेंडर के भीतर की एक पहचान है, 'हिजड़ा' या 'छक्का' जैसे विवादास्पद यौनिक पहचान वाले नामों के साथ इनकी वास्तविक पहचान छिपा दी जाती है| सामान्य मनुष्यों जैसी शारीरिक संरचना न होने के बावजूद भी किन्नर समुदाय प्रतिभा-सम्पन्न समुदाय है| हाल के कुछ दिनों में भारत में सेवा क्षेत्र के अलग-अलग विभागों में सैकड़ों की संख्या में किन्नर सामने आए हैं| मुद्दा यह है कि पैदा होते ही उनको विकल्पहीन कर दिया जाता है, अगर उनको भी सामान्य तरीके से परवरिश मिले तो शायद उन पर वेश्यावृत्ति, चोरी, अश्लीलता या मारपीट का इल्जाम कम ही लगे| भारतीय संविधान में किन्नरों को इंटरसेक्स, ट्रांससेक्सुअल श्रेणी में रखा गया और इनकी पहचान को थर्डजेंडर में 'ट्रांसजेंडर' श्रेणी में रखा गया है| तथ्य यह है कि 'ट्रांसजेंडर' और 'थर्डजेंडर' में कुछ बुनियादी अंतर पाया जाता है, इसलिए संविधान में उनको 'ट्रांस' श्रेणी में रखा जाना भी उनकी पहचान को 'डाइवर्ट' करने जैसा है| थर्ड जेंडर, जन्मजात 'किन्नर' होते हैं जबकि 'ट्रांस' व्यक्ति वह होता है, जो एक मुकम्मल लैंगिक पहचान होने के बावजूद भी अपने भीतर विपरीत 'सेक्स' की अनुभूति करता है| उनका व्यवहार भी अपने 'सेक्स' के विपरीत होता है, लड़कियाँ या लड़के अपने से विपरीत जीवन-शैली अपनाना चाहते हैं| atonomy science कहता है कि 'अगर किसी ट्रांस जेंडर की बेहतर 'काउंसिलिंग' की जाए तो वे सामान्य जीवन की तरफ मुड़ सकते हैं'| जबकि किन्नर जन्मजात लिंग-विहीन होते हैं, उनको किसी मेडिकल सुविधा से पूर्णतया ठीक नहीं किया जा सकता| 'सेक्स'और 'जेंडर' दोनों भिन्न चीजें हैं| 'सेक्स' जहाँ जन्म के साथ मिलने वाली प्राकृतिक पहचान है, वहीं 'जेंडर' समाजीकरण की प्रक्रिया है, जिसमें स्त्री और पुरुष के कर्तव्य निर्धारित किए जाते हैं| समाजीकरण की इस प्रक्रिया में स्त्री को 'स्त्री' और पुरुष को 'पुरुष' होना सिखाया जाता है| इस तरह जो लोग 'उत्पादन' या 'उत्पादकता' की प्रक्रिया में 'फिट' नहीं हो पाते, उन्हें समाज के भीतर या तो हाशिए पर डाल दिया जाता है या फिर समाज से बाहर रहने को विवश कर दिया जाता है|

हिंदी साहित्य में किन्नर विमर्श की उपस्थिति महज डेढ़-दो दशक की है, लेकिन इससे पहले संस्कृत ग्रन्थों, धार्मिक ग्रन्थों, पौराणिक आख्यानों और मिथकीय ग्रन्थों में भी किन्नर समुदाय का वर्णन मिलता है| तुलसीकृत रामचरितमानस में एक जगह लिखा है-

"जथा जोगु करि विनय प्रनामा| विदा किए सब सानुज रामा||
नारि पुरुष लघु मध्य बड़ेरे| सब सनमानि कृपा निधि फेरे||"

प्रसंग के अनुसार राम को वन विदा करने के दौरान स्त्री-पुरुष और किन्नर सभी आए थे, राम को विदा करके स्त्री-पुरुष तो वापस लौट आए लेकिन किन्नर वहीं इंतज़ार करते रहे, क्योंकि राम ने किन्नरों को

कोई आदेश नहीं दिया था| वन से वापस आने पर राज्य की सीमा पर 14 वर्षों तक राम का इंतज़ार करने वाले किन्नरों को उनकी भक्ति-भावना से खुश होकर राम ने आशीर्वाद दिया था कि 'वे कलयुग में राज करेंगे'| रामायण की यह कथा प्रमाणित करती है कि हर काल में किन्नरों का अस्तित्व था| महाभारत में अर्जुन द्वारा 'बृहन्नला' बनकर एक साल तक छिपकर रहना और अभिमन्यु की पत्नी उत्तरा को नृत्य की शिक्षा देने का उदाहरण भी किन्नरों के अस्तित्व और उनकी प्रतिभा को प्रमाणित करता है| संस्कृत नाटकों में भी किन्नर समुदाय का जिक्र मिलता है| कौटिल्य के अर्थशास्त्र में राज्य या समाज व्यवस्था के संदर्भ में किन्नर समुदाय का जिक्र मिलता है| कौटिल्य ने राजाओं के कर्तव्य निर्धारित करते हुए यह कहा है कि 'राजा को कभी भी किन्नर समुदाय के लोगों पर हाथ नहीं उठाना चाहिए'| प्राचीन रोमन युग से लेकर मध्यकालीन भारतीय समाज तक किन्नर समुदाय का उपयोग अन्तःपुर में रानियों की सुरक्षा, हरम की पहरेदारी, ख़ुफ़िया कार्यों में सहयोग देने से लेकर सेना में भी भर्ती होने के भी स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं| किन्नर, स्त्री और पुरुष का वेश धारण करने में सक्षम होते थे, इसीलिए बहुत से कार्यों में उनका सदुपयोग किया जाता था| किन्नर समुदाय के लोग, जो नृत्य और गायन में निपुण थे, वे लोग मंदिर, दरबार या अन्य सार्वजनिक स्थलों पर नृत्यकला का प्रदर्शन भी किया करते थे| अंग्रेजी में इनके लिए 'हरमोफ्रोडाइट्स' यानि 'स्त्री-पुरुष लक्षणों वाला पुरुष' माना गया है| ऐसी ही लक्षण वाली मूर्तियाँ ग्रीक सभ्यता में भी पाई गई हैं| दिल्ली सल्तनत, ख़ास करके अलाउद्दीन खिलजी के शासनकाल में किन्नर समुदाय के लोग प्रशासन में ऊँचे पदों तक पहुँचे थे| खिलजी का सेनापति मलिक काफ़ूर, जो कि एक किन्नर था और इसने दक्षिण भारत में दिल्ली सल्तनत का विस्तार करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी| गुजरात के सुल्तान मुज़फ्फर के शासनकाल में एक किन्नर मुमित-उल-मुल्क कोतवाल था| यहाँ तक कि जहाँगीर के शासनकाल में भी किन्नर समुदाय के लोग कई महत्त्वपूर्ण पदों पर रहे थे| अंग्रेजी शासनकाल में किन्नरों की अवनति का दौर प्रारम्भ हुआ| 1871 ईस्वी में अंग्रेजी शासन ने किन्नरों को 'क्रिमिनल ट्रिब्यूनल एक्ट' के तहत 'जरायमपेशा जनजातियों' के तहत शामिल कर दिया| इसका परिणाम यह हुआ कि सार्वजनिक जिम्मेदारियों में उनकी प्रतिभागिता लगभग शून्य हो गई, अब उनके पास नाचने-गाने व भीख माँगने के अलावा कोई चारा नहीं था| अंग्रेजों को डर था कि कहीं किन्नर समुदाय भी भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में शामिल न हो जाए, क्योंकि ख़ुफ़िया कार्यों में किन्नरों की लिप्तता के प्रमाण अंग्रेजों को मिलने लगे थे| आजादी के बाद 1951-52 में उस एक्ट को खत्म करते हुए किन्नरों को इस बंधन से मुक्त कर दिया गया| तब से लेकर आज तक भारतीय समाज में किन्नर समुदाय, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक इत्यादि तमाम अधिकारों से वंचित रहकर बहिष्कृत जीवन जीने को अभिशप्त है|

हिंदी साहित्य में मुकम्मल रूप में किन्नर विमर्श का प्रारंभ 'यमदीप' उपन्यास से होता है| 2008 में अनुसूया त्यागी ने 'मैं भी औरत हूँ' नामक उपन्यास लिखा, जो कि लैंगिक रूप से आधे-अधूरे लोगों की चिकित्सीय समस्याओं पर आधारित है| यह उपन्यास पूर्णतया किन्नर समुदाय पर आधारित न होकर किन्नरों की चिकित्सीय समस्याओं और वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है| 2010 में महेंद्र भीष्म कृत 'किन्नर कथा', 2013 में प्रदीप सौरभ कृत 'तीसरी ताली', 2014 में निर्मला भुराडिया कृत 'गुलाम मंडी' उपन्यासों में किन्नर जीवन से संबंधित मुद्दों को व्यवस्थित रूप से व्यक्त किया गया है| 'किन्नर कथा' किन्नर जीवन के सामाजिक पक्षों पर प्रकाश डालता है| जिस तरह धनाढ्य या ग़रीब तबके के लोग बराबर किन्नरों से नफरत करते हैं, उससे यही साबित होता है कि किन्नर समुदाय से घृणा करने का एकमात्र कारण उसका लिंग-विहीन होना नहीं है, बल्कि समाज में ओढ़ी हुई मान-मर्यादा का चोला व्यक्ति को निर्मम बना देता है| 'किन्नर कथा' के तारा और चंदा, 'तीसरी ताली' के डिम्पल, नीलम, ज्योति, रानी, कला मौसी, सुनयना जैसे किन्नर या फिर 'ग़ुलाम मंडी' की अंगूरी या रानी जैसे तमाम किन्नर, समाज की एक ही व्यवस्था या विचारधारा का शिकार हैं| 2016 में चित्रा मुद्गल कृत 'पोस्ट बॉक्स नं० 203 नाला सोपारा' ऐसा उपन्यास है, जिसमें एक माँ-बेटे के माध्यम से उनके जीवन की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक

परिस्थितियों को व्यक्त किया गया है| वर्तमान में विमर्शवादी समुदाय का व्यापक दुरूपयोग भी हो रहा है, चाहे वह स्त्री विमर्श हो या फिर दलित, आदिवादी या किन्नर विमर्श हो| 'पोस्ट बॉक्स...' उपन्यास में भी किस तरह से किन्नर समुदाय का दुरूपयोग राजनीति में निहित स्वार्थों के लिए किया जाता है, उससे भावी राजनीति के सुर हमें अभी से समझ आ जाना चाहिए| 2017 में युवा लेखक भगवंत अनमोल ने एक उपन्यास लिखा 'ज़िंदगी 50-50', इसमें किन्नर जीवन की बदली परिस्थितियाँ दिखाई देती हैं, भावी समय में किन्नर समुदाय को जिस संबल की आवश्यकता होगी, उसकी सशक्त उपस्थिति इस उपन्यास में देखने को मिलती है| अनमोल, जिसका भाई भी किन्नर था और बेटा भी किन्नर था, समाज की तमाम रूढ़ियों और परंपराओं को तोड़कर अनमोल अपने भाई और बेटे के साथ खड़ा होता है| 'मैं पायल' महेंद्र भीष्म का दूसरा किन्नर आधारित उपन्यास है, जिसमें किन्नर गुरु पायल सिंह के जीवन की वास्तविक घटना का वर्णन है| पायल के माध्यम से भारत के किसी भी राज्य, समुदाय या गद्दी के किन्नरों की वास्तविक स्थिति समझी जा सकती है| सुभाष अखिल कृत उपन्यास 'दरमियाना', गिरिजा भारती कृत उपन्यास 'अस्तित्व' जैसे उपन्यासों में कहानी की जगह यथार्थ ज्यादा प्रभावी हो चला है| 2013 में पारस दासोत कृत 'मेरी किन्नर केन्द्रित लघु कथाएँ' एक लघुकथा संग्रह है, जिसमें किन्नर, अपने ईश्वर से अपनी दुर्दशा के लिए सवाल करता है और उसे अपनी हर समस्या के लिए कटघरे में खड़ा करता है| यह पहला पूर्ण कहानी संग्रह है जो किन्नरों को लेकर लिखा गया| इसके अलावा और भी बहुत सारी कहानियाँ, कुछ नाटक और कवितायें भी प्रकाश में आए हैं| साहित्य की बात करें तो एक ठीक-ठाक आँकड़ा उपलब्ध होने लगा है| साहित्य के माध्यम से जो भी समस्याएँ हमारे सामने आ रही हैं, उन पर पूर्णतया विश्वास नहीं किया जा सकता, क्योंकि अभी तक कोई किन्नर अपने समुदाय के विषय में लिखने या बताने के लिए सामने नहीं आया है|

किन्नर समुदाय एक बंद समाज व्यवस्था है या यूँ कहें कि रहस्यमयी समाज है| यही कारण है कि हमारे समक्ष इनके विषय में बहुत से भ्रम भी व्याप्त हैं| भारत के अलग-अलग हिस्सों में रहने वाले किन्नर समुदाय के रहन-सहन, भाषा/बोली भले ही अलग हों, लेकिन उनकी जरूरतें, परिस्थितियाँ और समस्याएँ एक जैसी ही हैं| साहित्य में जो कुछ भी मौजूद है, वह पूरा सच नहीं है...क्योंकि बहुत सी सुनी-सुनाई बातें भी साहित्य में सम्मिलित होती जा रही हैं| सामाजिक समस्याओं में उनके विस्थापन, आर्थिक अधिकार और सम्मानित जीवन की समस्या सामने आती है| इसके अलावा शिक्षा, स्वास्थ्य, बिजली, पानी घर, जो दैनिक और सार्वजनिक जीवन में अत्यंत आवश्यक हैं, उनके लिए भी किन्नर समुदाय संघर्ष करता रहा है| सोचने वाली बात यह है कि आजादी के 73 साल बाद भी आज लाखों की संख्या में एक समुदाय को अपने जीवन जीने की बुनियादी जरूरतों के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है| भारतीय समाज, संविधान और सरकारें यह मानने को तैयार नहीं हैं कि हम भारत जैसे विविधता-युक्त देश में रहते हैं| हमारी दिक्कतें और जरूरतें तीसरी दुनिया के देशों के जैसी ही हैं, इसलिए भारत का विकास या समस्याओं का निराकरण हमारे समाज को ध्यान में रखकर करना चाहिए| इस मामले में हम पश्चिम का अनुकरण कर सकने में अक्षम हैं, क्योंकि भारत वर्गों, नस्लों, रंगों, जातियों, उपजातियों धर्मों, सम्प्रदायों से लेकर बहुत स्तरों पर विभाजित है| मार्क्स का बुर्जुआ और सर्वहारा यहाँ इसलिए लागू नहीं हो सकता, क्योंकि बुर्जुआ और सर्वहारा के बीच असली भारत यानि मध्य और निम्नवर्ग बसता है| यही मध्य और निम्नवर्ग सरकारें चुनता है, सरकारें गिराता और बदलता भी है और यहीं से भारत की असली तस्वीर भी बनती है| किन्नर समुदाय भारत में अभी भी हाशिए का समाज इसलिए है, क्योंकि 'पहचान' का संकट अभी भी उनके लिए बना हुआ है| किन्नरों को लगातार हेय दृष्टि से इसलिए देखा जाता रहा है, क्योंकि उन पर वेश्यावृत्ति, अनैतिक-अप्राकृतिक संबंध बनाने, चोरी, अश्लील व्यवहार और सार्वजनिक स्थलों पर मारपीट का आरोप आए दिन सामने आता रहता है| हाल ही में मेरठ में किन्नर समाज के दो गुटों में कहा-सुनी के बाद पुलिस ने दोनों गुटों को थाने में बुलाकर दौड़ाकर पीटा| उनकी एफआईआर भी दर्ज नहीं की गई, बल्कि उन्हें झूठे केस में फँसाकर जेल में डाल देने की धमकी भी पुलिस वालों द्वारा दी गई| कई बार

किन्नरों की हत्या की खबरें भी आती रही हैं| किन्नरों की बुनियादी जरूरतें और समस्याएँ वहीं हैं, जो सामान्य व्यक्ति की होती हैं| समाज, सरकार और व्यक्ति को अपने स्तर पर किन्नर समुदाय को समाज व्यवस्था में स्वीकार करना पड़ेगा| जब भी हम सामाजिक समानता या असमानता की बात करते हैं, तब हमें उस धुँधली लकीर पर जरुर ध्यान देना चाहिए, जो 'स्त्री' और 'पुरुष' के बीच पहचान के लिए संघर्षरत है| तमाम स्वयंसेवी संगठनों का यह मानना है कि जिस तरह पुरुष को 'मेल' और स्त्री को 'फीमेल' कहा जाता है, उसी तरह किन्नरों को 'शीमेल' का दर्जा दे दिया जाना चाहिये| वेश्यावृत्ति का जो इल्जाम किन्नर समुदाय पर लगता आया है, वह गलत नहीं है, क्योंकि किन्नर समुदाय के लोग वास्तव में मजबूरीवश या जरूरत को आधार बनाकर ही सही, इस धंधे में लिप्त पाए गए हैं| इसकी वजह से असमय मृत्यु, एड्स या अन्य यौन रोगों से ग्रसित होकर भी समाज को अपने विषय में गलत सन्देश दे रहे हैं| सिर्फ साहित्य एक माध्यम नहीं होना चाहिए वर्जित समुदाय को समझने का, सामाजिकता में भी जो बातें हम अपनी आने वाली पीढ़ी को देते हैं, उन रूढ़िवादी विचारों में परिवर्तन की आवश्यकता है| जो भी विवादित या अपमानित नाम किन्नर समुदाय को दिए गए हैं, उनको खत्म करने की नैतिकता हमें शुरू करनी चाहिए| राजनीति, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों, न्यायिक और सेवा क्षेत्रों, उद्योगों या लघु उद्योगों, शिक्षा, खेल जगत से लेकर सामान्य कामों तक में किन्नरों की सहभागिता को सुनिश्चित करना, उनको प्रेरित करना समाज और सरकार का काम है| प्रारम्भिक शिक्षा की शुरुआत में ही स्कूलों में हमें सामान्य बच्चों का परिचय स्वस्थ दृष्टिकोण के साथ किन्नर बच्चों से करवाना चाहिए, ताकि आगे चलकर वे घृणा का पात्र न बन सकें| किन्नर समुदाय के सम्बन्ध में जो भी भ्रम व्याप्त हैं, उन पर पर्याप्त शोध की आवश्यकता है| उनकी भाषा, सामाजिक व्यवहार, रहन-सहन, पूजा, त्यौहार, वेश-भूषा और अन्य दबी-छिपी मान्यताओं पर भरपूर खोज की जानी चाहिए, ताकि जो कुछ भी हमारे पूर्वाग्रह हैं, उनसे मुक्त हुआ जा सके| किसी भी देश की संस्कृति, समाज व्यवस्था, भाषा और वहाँ प्रचलित सामाजिक व्यवहार को समझने के लिए साहित्य एक सशक्त माध्यम है| इसलिए अगर साहित्य ही भ्रम का शिकार रहेगा तो यह तय कर पाना अत्यंत मुश्किल होगा कि हम दुनिया और समाज को क्या सन्देश देना चाहते हैं?

संदर्भ सूची-

1. किन्नर कथा-भीष्म, महेंद्र, सामयिक बुक्स, दरियागंज, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ-8.
2. यमदीप, माधव, नीरजा, सुनील साहित्य सदन, दरियागंज, नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ-93.
3. किन्नर विमर्श; साहित्य और समाज-बिश्नोई, मिलन, विकास प्रकाशन-कानपुर, 2018.
4. शिखंडी-स्त्री देह से परे-सिंह, शरद, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2020.
5. लैंगिक विमर्श और यमदीप-द्विवेदी, हर्षिता, अमन प्रकाशन, कानपुर, 2021
6. थर्ड जेंडर;अस्मिता और संघर्ष, संपादक-सिंह, विजेंद्र प्रताप, गौंड, रवि कुमार, अमन प्रकाशन, कानपुर, 2020.
7. थर्ड जेंडर के संघर्ष का यथार्थ, डॉ० शगुफ़्ता नियाज़, विकास प्रकाशन-कानपूर, 2018.
8. हिंदी कथा साहित्य में किन्नर जीवन, डॉ० दिलीप मेहरा, वाणी प्रकाशन-नई दिल्ली, 2019
9. थर्ड जेंडर-कथा आलोचना, डॉ० एम्. फ़ीरोज़ खान, अनुसंधान पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स-कानपुर, 2017.